## अक्षेत्र्यमसिनाग्न्यनं कावन्धवधमभ्यधुः। धिङ्गः प्रपतनं घोरं कोदान्तत्वमनायवत्॥ ७८॥

यक्कदत्यादि। दतः स्ती जिङ्गभावं निवर्ण क्षद्राद्वियते। ज॰म॰
कवश्वधं योजनवा हो र्व्यधमभ्यधुः अभिहितवन्तः अभिपूर्व्योधा
अभिधाने वर्त्तते की हमं अक्ते ग्रं प्रयासरहितं कस्मात् अभिना
सुखमरणात् तञ्चाम्यनं अन्ते तस्याग्निरक्षत् अस्माकं धिक्
प्रपतनं विनामं दुः खेन घोरलात् क्षेदान्तलं अन्ते पूर्तीभावन्त
द्यास्ति अर्थ आदिलादच् अना यवत् अना याना सिव अक्षेग्य
प्रपतन मञ्जूषे भावसाधना कृत्य जुटाव ज्ञासित ॥ ७८॥

स्ती खिन्न छ द्धिकारं निवर्त्य छ दु चर्ते। त्रक्षे स्व मित्या दि भ॰ ते कव स्थ यो जनवा हो र्व्य में सरणं त्र स्थ पुं छ काव नः त्र भिपूर्व्य धा ज्ञ खां रूपं त्र खुरितिवत् की ह यं त्र सिना त्र को ग्रंग को ग्रां ज्ञ को ग्रंग को ग्रां को ग्रां को ग्रां विक के त्र सिना या त्र त्र सिना ने विक को प्रमानं वा त्र त्र त्र प्र को प्रमानं वा त्र त्र त्र प्र को प्रमानं वा त्र त्र त्र प्र को प्र को प्र को प्र को प्र को सिक के त्र त्र प्र को प्र को प्र को प्र को सिक के त्र त्र व्य स्थ प्र को प्र को प्र को सिक के त्र को प्र को सिक के त्र को त्र